भारतीय ज्ञान धरोहर

विमर्श और परंपरा

सम्पादक

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

भारतीय ज्ञान धरोहर

विमर्श और परम्परा

सम्पादक

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

Ph.D., D.Lit. (Sub.)

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,
अजमेर

छवि पब्लिकेशन्स

अजमेर-305001

प्रकाशक :
छवि पब्लिकेशन्स
अजमेर-305001
मो. 9660111549

संस्करण :
प्रथम 2023

ISBN : 978 - 81 - 89435 - 69 - 1

मूल्य - 400/-

रचना - भारतीय ज्ञान धरोहर : विमर्श और परम्परा

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

28

पं. युधिष्ठिर मीमांसक और संस्कृत व्याकरण का इतिहास

नरेन्द्र सिंह नाथावत
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

संस्कृत व्याकरण पर क्रमबद्ध और प्रमाणिक इतिहास-लेखन का अभाव रहा है। प्राचीन भारतीय इतिहास के निर्माण में भी आधुनिक ऐतिहासिक व्याकरण-ग्रन्थों का बहुत कम उपयोग हुआ। शुंग काल के ऐतिहासिक पुनर्निर्माण में केवल पतंजलि का महाभाष्य ही प्रमुख स्रोत माना गया। यद्यपि संस्कृत वाङ्मय में व्याकरण शास्त्र का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है, परंतु इसका व्यवस्थित इतिहास न अंग्रेज़ी में उपलब्ध था, न किसी अन्य भारतीय भाषा में।

डॉ. बेलवलकर और पं. गुरुपद हालदार जैसे विद्वानों ने इस दिशा में प्रारम्भिक कार्य अवश्य किए, परंतु संस्कृत व्याकरण का पहला संगठित और समग्र इतिहास पं. युधिष्ठिर मीमांसक ने लिखा। उन्होंने 1942 में सामग्री-संकलन आरम्भ कर 1950 में ग्रन्थ को पूर्ण किया। इसके प्रथम संस्करण की भूमिका में उन्होंने व्याकरण-शास्त्र के इतिहास को स्पष्ट रूप से पूर्वपीठिका के रूप में प्रस्तुत किया। इस प्रकार मीमांसक जी संस्कृत व्याकरण-इतिहास के प्रथम क्रमबद्ध इतिहासकार माने जाते हैं।

पं. युधिष्ठिर मीमांसक ने संस्कृत भाषा की प्रवृत्ति को अपने ग्रन्थ के प्रथम अध्याय में स्पष्ट किया। उसके बाद उन्होंने व्याकरण-शास्त्र की उत्पत्ति का ऐतिहासिक विश्लेषण प्रस्तुत करते हुए यह सिद्ध किया कि व्याकरण का मूल स्रोत वेद हैं। मनु, न्याय, चरक और भारतीय परम्परा—सभी भाषा एवं शास्त्रों की उत्पत्ति वेद से ही मानते हैं। मीमांसक जी ने वेद, उनकी शाखाओं, ब्राह्मणों, कल्पसूत्रों और आयुर्वेद संहिताओं को समानकालिक माना और मंत्रदृष्टा ऋषियों को ही इतिहास, पुराण तथा धर्मशास्त्रों का प्रवक्ता बताया। इस प्रकार उन्होंने भाषा और व्याकरण की ऐतिहासिक जड़ें वेद-परम्परा में स्थापित कीं।

पं. युधिष्ठिर मीमांसक ने प्राचीन परम्परा के आधार पर यह माना कि भाषा

और व्याकरण का आदिमूल परमेश्वर तथा वेद ही हैं। मनु वेद को सर्वज्ञानमय कहते हैं, इसलिए व्याकरण की उत्पत्ति भी वेदों से मानी गई। वाल्मीकि रामायण से उस समय शुद्ध व्याकरण-परंपरा का ज्ञान होता है। यास्क ने व्याकरणाचार्यों का उल्लेख किया और मीमांसक ने स्पष्ट किया कि त्रेतायुग के आरंभ तक व्याकरण-ग्रन्थ अस्तित्व में थे। ह्वेनसांग ने भी ब्रह्मा-प्रणीत व्याकरण का निर्देश किया है।

ब्रह्मा के बाद बृहस्पति व्याकरण के प्रमुख आचार्य माने गए—ऐतरेय ब्राह्मण, अर्थशास्त्र, इतिहास-पुराण, वेदांग और पतंजलि के महाभाष्य सभी में उनका उल्लेख मिलता है। पतंजलि ने बृहस्पति द्वारा इन्द्र को शब्दोपदेश देने की परंपरा को स्वीकार किया है। तैत्तिरीय संहिता में भी इन्द्र का उल्लेख मिलता है। बाद में दूसरे सम्प्रदाय को महेश्वर या शैव कहा गया।

इस प्रकार मीमांसक ने व्याकरण-परम्परा को दिव्य मूल से प्रारम्भ मानते हुए ब्रह्मा, बृहस्पति और शैव परंपरा के आचार्यों तक उसका क्रमबद्ध विकास प्रतिपादित किया।

पं. युधिष्ठिर मीमांसक ने संस्कृत व्याकरण के इतिहास का पुनर्निर्माण करते समय यह दिखाया कि पाणिनि, व्याकरण-परम्परा के प्रथम निर्माणकर्ता नहीं, बल्कि एक अत्यन्त विकसित, वैज्ञानिक और दीर्घकालिक व्यवस्था के उत्तराधिकारी थे। इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए उन्होंने वैदिक साहित्य, प्रातिशाख्यों, ऋक्तन्त्र, वाजसनेयी प्रातिशाख्य, तैत्तिरीय प्रातिशाख्य, महाभाष्य और अन्य प्राचीन ग्रन्थों की गहन छानबीन की।

मीमांसक जी ने यह स्पष्ट किया कि पाणिनि से पहले 85 व्याकरणाचार्य विभिन्न ग्रन्थ-परम्पराओं में उल्लिखित हैं। इनमें से कुछ ऋषि-परम्परा से जुड़े हैं, कुछ वेदांगरूप प्रातिशाख्यों के कर्ता हैं और कुछ वैयाकरण परम्परा के स्वतंत्र अध्येता एवं शिक्षक थे। यह संख्या यह सिद्ध करती है कि व्याकरण शास्त्र का विकास अत्यन्त प्राचीन काल से सतत चलता रहा।

पाणिनि ने स्वयं अष्टाध्यायी में 10 आचार्यों के नाम लिए हैं— आपिशलि, कश्यप, गार्ग्य, गालव, चक्रवर्मण, भारद्वाज, शाकटायन, शाकल्य, सेनक और स्फोटायन।

ये आचार्य पाणिनि से पूर्व सिद्धान्त-निर्माण और नियम-निर्धारण में सक्रिय थे। पाणिनि ने इनकी दृष्ट्रियों को स्वीकार भी किया और कहीं-कहीं संशोधन भी किया।

प्रातिशाख्य ग्रन्थ संस्कृत ध्वनिशास्त्र, पदपाठ, स्वर-विन्यास, उच्चारण और

शब्दरचना के प्रामाणिक ग्रन्थ हैं। इनमें विभिन्न वेद-शाखाओं के व्याकरणाचार्यों का उल्लेख मिलता है। मीमांसक जी ने इन बिखरे उल्लेखों को एकत्र करके 59 वैदिक व्याकरण-कर्मियों की सूची तैयार की। ये सभी ध्वनि-विन्यास, संहितापाठ, स्वर, पद-विभाग और नियम-निर्धारण में निपुण विद्वान थे। इनमें अग्निवेश्य, अग्निवेश्यायन, आत्रेय, औपशवि, काण्डमायन, कात्यायन, काश्यप, जातूकर्ण्य, बाभ्रव्य, व्याडि, शाकटायन, शौनक, माध्यन्दिन, शाकल्य, हारीत, वाल्मीकि आदि प्रमुख हैं।

इन सभी का कार्य पाणिनि से पहले के व्याकरण-ज्ञान को वैज्ञानिक रूप देने में अत्यन्त उपयोगी रहा।

मीमांसक जी ने यह भी बताया कि प्राचीन परम्परा में ब्रह्मा, बृहस्पति और इन्द्र को व्याकरण के आद्य आचार्य माना गया। ब्रह्मा के व्याकरण की चर्चा ह्वेनसांग ने की है। बृहस्पति का उल्लेख ऐतरेय ब्राह्मण, अर्थशास्त्र, महाभाष्य, वेदांग और इतिहास-पुराणों में मिलता है। पाणिनि के महाभाष्य में इन्द्र को शब्दोपदेश देने की परम्परा का उल्लेख है। यह परम्परा केवल मिथक नहीं, बल्कि यह दर्शाती है कि भारतीय व्याकरण का मूल 'दिव्य' अर्थात् वेद-सम्बद्ध माना गया।

मीमांसक जी का सबसे बड़ा योगदान है— उन्होंने इतिहास को 'शब्द-विकास, ध्वनि-विन्यास और व्याकरण सिद्धान्तों' से जोड़कर देखा। उन्होंने यह दिखाया कि व्याकरण के कई नियम पाणिनि के द्वारा निर्मित नहीं, बल्कि उनसे पूर्व व्याकरणाचार्यों के द्वारा विकसित थे। उन्होंने केवल आचार्यों की सूची नहीं दी, बल्कि यह भी देखा कि किस आचार्य का योगदान किस क्षेत्र में था—ध्वनि, पदविन्यास, छन्द, संहिता या शब्द-निर्माण।

उदाहरण के रूप में— शाकटायन ने प्रत्यय-सिद्धान्तों का विकास किया। शौनक ने ध्वनिशास्त्रीय नियमों को व्यवस्थित किया। व्याडि ने रूप-निर्माण पर कार्य किया। शाकल्य पदपाठ-परम्परा के संरक्षक थे। आत्रेय आदि ने संहितापाठ और स्वर-विन्यास को स्थापित किया।

मीमांसक जी ने संपूर्ण परम्परा की पड़ताल करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि—

* संस्कृत व्याकरण का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है।
* व्याकरण का मूल वेद-परम्परा है।
* पाणिनि से पहले व्याकरण विज्ञान एक विकसित शास्त्र था।
* प्रातिशाख्य ग्रन्थ व्याकरण के वास्तविक प्रारम्भिक स्रोत हैं।
* 85 आचार्यों की परम्परा दिखाती है कि पाणिनि ने पूर्ववर्ती परम्परा को संश्लेषित

करके एक अद्वितीय रूप दिया।

पाणिनि के बाद भारतीय व्याकरण की परंपरा निरंतर आगे बढ़ती रही। विभिन्न युगों में अनेक आचार्यों ने संस्कृत भाषा को संरक्षित-समृद्ध किया तथा अपने-अपने मतों पर आधारित व्याकरण-ग्रंथों का निर्माण किया। पं. युधिष्ठिर मीमांसक द्वारा उल्लिखित यह परंपरा भारतीय भाषिक-विचार के विकास का ऐतिहासिक दस्तावेज मानी जा सकती है।

(1) कातन्त्र (2000 वि.पू.) :- कातन्त्र परंपरा को व्याकरण का सरल रूप माना जाता है। यह विशेषकर शिक्षार्थियों के लिए उपयोगी था। इसके नियम पाणिनि-व्याकरण की तुलना में अधिक सहज थे, इसलिए यह प्रारम्भिक व्याकरण-शिक्षा के रूप में प्रतिष्ठित हुआ।

(2) चन्द्रगोमी — चान्द्र व्याकरण (1000 वि.पू.) :- चन्द्रगोमी ने चान्द्र-व्याकरण की रचना की, जो मूलतः पाणिनि-व्याकरण का सरल विकल्प था। इसमें रूप-निर्माण के नियम अधिक सीधे और कम तकनीकी रूप में दिये गये, इसलिए बौद्ध परंपरा में यह विशेष लोकप्रिय हुआ।

(3) क्षपणक — क्षपणक व्याकरण (प्रथम शताब्दी) :- क्षपणक को संस्कृत कवियों में भी गिना जाता है। उन्होंने भाषा की सूक्ष्मताओं को समझते हुए अपने तरीके का व्याकरण-ग्रंथ बनाया, जिसमें रूप, धातु-प्रयोग और शब्द-निर्माण को व्यावहारिक रूप दिया गया।

(4) देवनन्दी (दिग्वस्त्र) — जैनेन्द्र व्याकरण (सं. 500 से पूर्व) :- यह जैन परंपरा का महत्वपूर्ण व्याकरण है। जैनेन्द्र व्याकरण में पाणिनि के अनेक सूत्रों का रूपान्तर कर अधिक संक्षिप्त और व्यवहारिक व्याख्या दी गई। जैन मठों में यह अत्यधिक प्रचलित रहा।

(5) वामन — विश्रान्त विद्याधर (सं. 400-600) :- इन्होंने व्याकरण-विचार में नयी टीका और व्याख्या-परंपरा को प्रोत्साहित किया। इनके द्वारा व्याकरण को दार्शनिक आधार भी मिलने लगा।

(6) पाल्यकीर्ति — जैन शाकटायन (871-924) :- शाकटायन का मुख्य सिद्धांत यह था कि 'सारे नाम धातुजन्य हैं।' यह सिद्धांत जैन-भाषाविचार में अत्यंत प्रभावी हुआ। इनके ग्रंथों ने शब्दों की उत्पत्ति और धातुओं के रूप-विकास पर प्रकाश डाला।

(7) शिवस्वामी (914-940) :- इनके ग्रंथ भले कम ज्ञात हों, परंतु व्याकरण-शास्त्र में धातु-प्रयोग और संधि-विचार को व्यवस्थित करने में इनका योगदान

माना जाता है।

(8) भोजदेव — सरस्वतीकण्ठाभरण (1075-1110) :- राजा भोज न केवल शासक थे, बल्कि महान विद्वान भी। उनका ग्रंथ सरस्वतीकण्ठाभरण व्याकरण, काव्य और शास्त्र — तीनों का संगम है। इसमें भाषा के रूप-विधान के साथ-साथ काव्य-रस और अलंकारों का भी अद्‌भुत विश्लेषण है।

(9) बुद्धिसागर (1080) :- इनके ग्रंथ बौद्ध परंपरा में उपयोगी रहे। विशेषकर धातु-विचार और शब्द-शास्त्र में इनकी व्याख्या महत्वपूर्ण मानी जाती है।

(10) भद्रश्वरसूरि — दीपक (1200 से पूर्व) :- जैन विद्वान होने के कारण इन्होंने प्रयोग-आधारित व्याकरण लिखा। दीपक-व्याकरण सरल और शिक्षाप्रद माना जाता है।

(11) वर्धमान (1150-1225) :- इन्होंने जैन-व्याकरण परंपरा को आगे बढ़ाया। शब्दसंग्रह, कारक, धातु-प्रयोग आदि पर लिखे ग्रंथ शिक्षा-परंपरा का आधार बने।

(12) हेमचन्द्र — हेमव्याकरण (1145-1229) :- हेमचन्द्र का हेमव्याकरण जैन और संस्कृत दोनों परंपराओं में अत्यंत प्रतिष्ठित है। यह पाँच भागों में विभाजित है और प्राकृत-व्याकरण पर भी उनकी महती देन है। उन्हें 'जैन पाणिनि' कहा जाता है।

(13) मलयगिरि — शब्दानुशासन (1188-1250) :- इनका 'शब्दानुशासन' पाणिनीय प्रणाली पर आधारित है। उन्होंने पाणिनि के जटिल सिद्धांतों को शिक्षार्थियों के लिए सरल बनाने का प्रयास किया।

(14) क्रमदीश्वर — जौमर (प्रथम शती से पूर्व) :- यह परंपरा भाषा-प्रयोग, विशेषकर शैली और रूप-विन्यास पर केंद्रित थी। कुछ विद्वान इनके ग्रंथों को वैदिक विश्लेषण से जोड़ते हैं।

(15) अनुभूतिस्वरूप — सारस्वत व्याकरण (1250) :- सारस्वत-व्याकरण अत्यंत लोकप्रिय और सरल व्याकरण है। भारतीय परंपरा में शिशु-व्याकरण के रूप में यह अत्यधिक प्रचलित रहा।

(16) वोपदेव — मुग्धबोध (1287-1350) :- मुग्धबोध आज भी कई पारंपरिक पाठशालाओं में पढ़ाया जाता है। इसमें व्याकरण को अत्यंत सहज, क्रमबद्ध और सरल रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह मध्यकालीन भारत का सबसे उपयोगी व्याकरण माना जाता है।

(17) पद्मनाभ — सुपद्म (14वीं शती) :- इनका व्याकरण कवियों के

लिए उपयोगी माना जाता है। इसमें शब्दों के लाघव और सौष्ठव पर ध्यान है।

(18) विनयसागर — भोजव्याकरण (1650-1700) :- इन्होंने राजा भोज की परंपरा को आगे बढ़ाया। इनके द्वारा व्याकरण को अलंकार और काव्य-रचना से जोड़कर समझाया गया।

पाणिनी द्वारा उल्लिखित आचार्य :-

(1) शिव (लगभग 91,500 विक्रम पूर्व) :- मीमांसक जी के अनुसार महेश्वर शिव अत्यंत पुरातन व्याकरण-परंपरा के प्रथम स्रोत माने जाते हैं। पुराणों में शिव को ध्वनि, नाद और शब्द का अधिपति कहा गया है। महेश्वर सूत्रों का प्रादुर्भाव भी उन्हीं की दिव्य डमरू-ध्वनि से माना जाता है।

शिव के माता-पिता क्रमशः सुरभि और कश्यप प्रजापति बताए जाते हैं और इनके दस भाई 'एकादश रुद्र' प्रसिद्ध हैं। भव, त्र्यम्बक, शूलपाणि, विशालाक्ष आदि नाम व्याकरण की प्राचीन परंपरा में शिव की विद्वत्ता का द्योतक हैं। भाषिक ध्वनियों की उत्पत्ति को शिव-नाद से जोड़ने से स्पष्ट होता है कि भारतीय परंपरा में व्याकरण की जड़ें अत्यंत गहरी और दार्शनिक रही हैं।

(2) बृहस्पति (लगभग 10,000 विक्रम पूर्व) :- वेदों और उपनिषदों में बृहस्पति को वाणी का स्वामी तथा देवताओं का गुरु कहा गया है। बृहदारण्यक उपनिषद में 'वाणी के पति' के रूप में उनकी स्थिति भाषा-विज्ञान के उच्चतम पद पर स्थापित करती है। इन्द्र के गुरु के रूप में उन्होंने न केवल व्याकरण का, बल्कि तर्क, धर्मशास्त्र और नीति का भी प्रबल विकास किया। इनका प्रसिद्ध ग्रंथ शब्दपारायण प्राचीन स्तर पर शब्द-शास्त्र की पहली व्यवस्थित कृति मानी जाती है। पाणिनि ने बृहस्पति को व्याकरण-परंपरा में अत्यंत महत्वपूर्ण मानकर उनका सम्मान किया है।

(3) इन्द्र (लगभग 9500 विक्रम पूर्व) :- तैत्तिरीय संहिता के अनुसार इन्द्र को व्याकरण-शास्त्र का प्रथम रचनाकार माना गया है। इन्द्र के अनेक आचार्य थे—प्रजापति, बृहस्पति, अश्विनीकुमार, यम और कौशिक। इससे स्पष्ट होता है कि इन्द्र की शिक्षा अत्यंत बहुस्तरीय और गहन थी।

इन्द्र की व्याकरण-परंपरा अब उपलब्ध नहीं, किन्तु जैन-शाकटायन व्याकरण तथा तमिल व्याकरण में इनके सूत्रों का प्रभाव देखा जाता है। पुराणों और आयुर्वेद में भी इन्द्र को शब्द, छन्द, अर्थशास्त्र, मीमांसा आदि का ज्ञाता माना गया है।

मीमांसक जी ने दिव्य-वर्षों को सौर-वर्ष मानकर इन्द्र का काल लगभग 9500 विक्रम पूर्व निर्धारित किया है।

(4) वायु (लगभग 9500 विक्रम पूर्व) :- वायु का उल्लेख तैत्तिरीय संहिता

में मिलता है। इन्द्र के व्याकरण रचना में वायु सहायक रहे। परंपरा में हनुमान को वायु का पुत्र माना गया है, और हनुमान भी व्याकरण के कुशल आचार्य थे। यह बताता है कि वायु-परंपरा ने भाषा और व्याकरण अध्यापन में भी विशेष महत्व रखा।

(5) भारद्वाज (लगभग 9300 विक्रम पूर्व) :- अंगिरस-बृहस्पति के पुत्र भारद्वाज को 'सुराचार्य' कहा गया है। इन्होंने इन्द्र से व्याकरण सीखा और अपने शिष्य आत्रेय-पुर्नबसु को आयुर्वेद पढ़ाया। भारद्वाज ऋग्वेद के मंत्रद्रष्टा तथा काशीपति देवोदास के पुरोहित थे। इनके द्वारा आयुर्वेद, धनुर्वेद, राजनीति, शिक्षा, धनुर्विद्या, अर्थशास्त्र आदि अनेक ग्रंथ रचित माने जाते हैं।

(6) भागुरि (लगभग 4000 विक्रम पूर्व) :- भागुरि आचार्य का उल्लेख प्रक्रिया-कौमुदी, भाषा-वृत्ति तथा अन्य ग्रंथों में मिलता है। इनके पिता भगुर, और गुरु बृहगर्ग थे। भागुरि ने सामवेद और यजुर्वेद की शाखाओं का प्रवचन किया तथा ब्राह्मण-ग्रंथों के सम्प्रेषण में महत्वपूर्ण योगदान दिया। मीमांसक जी के अनुसार, शाखाओं का प्रवचन भारतयुद्ध के पहले पूर्ण हो चुका था, इसलिए भागुरि का काल लगभग 4000 वर्ष पूर्व माना गया।

(7) पौष्करसादि (लगभग 3100 विक्रम पूर्व) :- महाभाष्य में वर्णित पौष्करसादि के पिता पुष्करसत थे। कुछ आचार्य इन्हें प्रागदेश का निवासी मानते हैं, जबकि कुछ के अनुसार यह पुष्कर (राजस्थान) क्षेत्र से संबंधित थे। व्याकरण-मतों में इनका योगदान अनेक कथनों के माध्यम से देखा जाता है।

(8) चारायण (लगभग 3100 विक्रम पूर्व) :- महाभाष्य और कौटिल्य अर्थशास्त्र में चारायण का उल्लेख मिलता है। पिता चर थे। कृष्ण-यजुर्वेद की चारायणीय शाखा के प्रवक्ता होने से स्पष्ट है कि ये ब्राह्मण-ग्रंथों के प्रतिष्ठित आचार्य थे। 'चारायणीय मन्त्रार्षाध्याय' नामक ग्रंथ आज भी उपलब्ध है।

(9) काशकृत्स्न (लगभग 3100 विक्रम पूर्व) :- पाणिनि और महाभाष्य दोनों में अत्यंत सम्मानित आचार्य। पिता का नाम भी कशकृत्स्न था। बादरायण के शिष्य माने जाते हैं। धातुपाठ, मीमांसा-ग्रंथ, यज्ञ-विधि-संबंधी ग्रंथ आदि इनके नाम से संबद्ध हैं। इनकी विद्वत्ता का प्रभाव पाणिनीय व्याकरण पर भी माना जाता है।

(10) शन्तनु (लगभग 3100 विक्रम पूर्व) :- फिट सूत्र में इनका उल्लेख मिलता है। यद्यपि विस्तृत जानकारी नहीं मिलती, पर महाभाष्य के सन्दर्भ में इन्हें व्याकरण परंपरा का मान्य विद्वान माना गया है।

(11) वैयाघ्रपद्य (लगभग 3100 विक्रम पूर्व) :- पिता व्याघ्रपाद, जो वशिष्ठ के पुत्र थे। काशिका 4/2/65 में इनके मत का उल्लेख मिलता है। इनके

व्याकरणिक विचार पाणिनीय सिद्धांतों के समानांतर प्रचलित थे।

(12) माध्यान्दिनी (लगभग 3000 विक्रम पूर्व) :- काशिका में उल्लेख मिलता है। पिता का नाम मध्यमनन्दिन था। पाणिनि ने इन्हें उत्साहादि गण में स्थान दिया है, इससे इनके व्याकरण संबंधी सिद्धांतों की विशिष्टता का पता चलता है।

(13) रौढ़ि (लगभग 3000 विक्रम पूर्व) :- महाभाष्य और काशिका दोनों में नाम मिलता है। व्याकरण के अनेक स्थलों पर इनका मत पाणिनि के समकक्ष उद्धृत है। रौढ़ि-परंपरा भाषा-रूपों की व्यावहारिक व्याख्या के लिए प्रसिद्ध थी।

(14) शौनकि (लगभग 3000 विक्रम पूर्व) :- चरक-टीकाकार झंझट द्वारा उल्लेखित। पिता शौनक थे। वैदिक परंपरा और व्याकरण — दोनों क्षेत्रों में शौनकि का विशिष्ट स्थान रहा। शौनक-सूत्र और शौनक-संहिता इनके नाम से संबंधित माने जाते हैं।

(15) गौतम (लगभग 3000 विक्रम पूर्व) :- यद्यपि पाणिनि ने इनका नाम नहीं दिया, पर महाभाष्य में इनका उल्लेख है। न्याय-परंपरा के प्रवर्तक गौतम को व्याकरण और तर्क दोनों में अधिकार प्राप्त था। इनके मतों का उपयोग पाणिनि ने स्थलों-स्थलों पर किया है।

(16) व्यादि (लगभग 2900 विक्रम पूर्व) :- व्यादि को दाक्षायण भी कहा जाता है। यह पाणिनि का मामा माना गया है। व्यादि के द्वारा शब्द-रचना और वाक्य-विन्यास के अनेक सिद्धांत प्रतिपादित हुए। व्यादि का योगदान पाणिनि-पूर्व परंपरा का महत्वपूर्ण अंग है।

पं. युधिष्ठिर मीमांसक ने बौद्ध और पाश्चात्य काल-मीमांसा को अस्वीकार करते हुए कहा कि पाणिनि बुद्धोत्तर नहीं, बुद्ध-पूर्व थे। उनका मुख्य तर्क यह है कि यदि पाणिनि बुद्ध के बाद होते, तो वे बौद्ध साहित्य में अत्यन्त प्रसिद्ध 'निर्वाण' शब्द का अर्थ अवश्य बताते; परन्तु ऐसा नहीं है। इसलिए निर्वाण-शब्द का अभाव सिद्ध करता है कि पाणिनि बुद्ध से पहले के हैं।

मीमांसक ने पाणिनि-कालीन विद्वानों—कात्यायन, भारद्वाज, सुनाग, क्रोष्टा और बाडव का उल्लेख कर उनके काल को लगभग 2800 विक्रम पूर्व बताया। उन्होंने पश्चिमी विद्वानों के मतों को भ्रमपूर्ण कहकर खण्डित किया।

आगे की परंपरा में भर्तृहरि, कुमारिल, जिनेन्द्रबुद्धि, क्षीरस्वामी, हेलाराज, हेमचन्द्र, हरदत्त, सायण और नागेश जैसे महत्त्वपूर्ण वार्तिककारों और वाक्यकारों का उल्लेख मिलता है, जो पाणिनीय व्याकरण को आगे बढ़ाने वाले थे।

मीमांसक का संपूर्ण विवेचन यह सिद्ध करता है कि भारतीय व्याकरण-परम्परा

अत्यन्त प्राचीन, संगठित और निरन्तर विकसित होती रही है।

महाभाष्य के टीकाकार :- पतंजलि के महाभाष्य पर विभिन्न आचार्यों ने काल-क्रम में टीकाएँ लिखीं, और पं. युधिष्ठिर मीमांसक ने उनके ऐतिहासिक मूल्यांकन के आधार पर भारतीय व्याकरण-परम्परा की प्राचीनता सिद्ध की।

(1) भर्तृहरि :— भर्तृहरि को महाभाष्य की आरम्भिक टीका-परंपरा का आधार माना जाता है। इत्सिंग ने उन्हें बौद्ध अनुयायी मानकर विक्रम 708-709 के आसपास का बताया, किन्तु मीमांसक ने इसे भ्रमपूर्ण कहा। उनका तर्क है कि इत्सिंग ने भर्तृहरि के मौलिक ग्रन्थों को देखा ही नहीं, इसलिए उसका विवरण विश्वसनीय नहीं है। भारतीय प्रमाण—जैसे हरिस्वामी, स्कन्धस्वामी, प्रबन्ध-चिन्तामणि—भर्तृहरि को अत्यन्त प्राचीन सिद्ध करते हैं। मीमांसक के अनुसार उनका समय विक्रम से 6-7 शताब्दी पूर्व सिद्ध होता है, क्योंकि भर्तृहरि से बाद वाले शबरस्वामी स्वयं विक्रम से पाँच शताब्दी पूर्व हुए थे।

(2) अज्ञात कर्त्तक — 680 विक्रम से पूर्व के टीकाकार :- महाभाष्य की एक अन्य टीका के लेखक का नाम निश्चित नहीं है, किन्तु हरिस्वामी द्वारा शतपथ ब्राह्मण की टीका में दिए गए संकेत से उसका काल स्पष्ट होता है। उसमें इसी टीका के आधार पर 680-695 विक्रम संवत् से पूर्व की अवधि मानी गई है। यह तथ्य भी महाभाष्य-टिप्पणी परम्परा की प्राचीनता का प्रमाण है।

(3) कैय्यट :— 'प्रदीप' टीका के महान रचयिता। महाभाष्य की सबसे प्रसिद्ध टीकाओं में कैय्यट कृत 'प्रदीप' का विशेष महत्व है। कैय्यट, जैय्यट उपाध्याय के पुत्र थे और उनका एक प्रमुख शिष्य उदयोतकर था।

पं. मीमांसक ने कैय्यट के समय पर विस्तृत विचार कर यह निष्कर्ष दिया कि उन्हें विक्रम संवत् की 11वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से आगे नहीं ले जाया जा सकता। वे सम्भवत: इससे भी प्राचीन हों, परन्तु निश्चित प्रमाण न होने से उन्हें 1100 वि.सं. से पूर्व का माना गया।

कैय्यट ने महाभाष्य की व्याख्या को सर्वाधिक व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किया, जिससे वे महाभाष्य-परम्परा का केन्द्रीय स्तम्भ बन जाते हैं।

(4) मैत्रेय रक्षित :— व्याकरण-टीकाओं में बौद्ध परम्परा भी महत्त्वपूर्ण है, जिसमें मैत्रेय रक्षित का उल्लेख मिलता है। मीमांसक ने उन्हें लगभग 1100 विक्रम संवत् का आचार्य माना है। उनकी टीका से बौद्ध और पाणिनीय व्याकरण परम्परा के परस्पर प्रभाव का भी पता चलता है।

पं. युधिष्ठिर मीमांसक ने पतंजलि के महाभाष्य और कैय्यट-कृत प्रदीप पर

लिखी गई विभिन्न टीकाओं का गहन परीक्षण करके उनके कर्ताओं का काल निर्धारित किया। उन्होंने चिन्तामणि, मल्लैय, रामचन्द्र सरस्वती, ईश्वरानन्द सरस्वती, अन्नमभट्ट, नारायण, रामसेवक, नागेश भट्ट, आदेन्न, सर्वेश्वर दीक्षित, हरिराम तथा कुछ अज्ञात भाष्यकारों का समय साहित्यिक प्रमाणों के आधार पर निश्चित किया। इससे व्याकरण-परंपरा के विकास का एक सतत और क्रमबद्ध स्वरूप सामने आता है।

इसी तरह उन्होंने अष्टाध्यायी पर वृत्तियाँ लिखने वाले आचार्यों का काल भी प्रमाणिक रूप से विभाजित किया, जिससे यह स्पष्ट होता है कि पाणिनि के बाद व्याकरण की परंपरा निरंतर सक्रिय रही।

मीमांसक ने पाणिनि के बाद विकसित वैयाकरणों की एक व्यवस्थित श्रृंखला प्रस्तुत की, जिनमें प्रमुख हैं— कातन्त्रकार, चन्द्रगोमी, क्षपणक, देवनन्दी, वामन, पाल्यकीर्ति, शिवस्वामी, भोजदेव, बुद्धिसागर, भद्रेश्वरसूरि, वर्धमान, हेमचन्द्र, मलयगिरि, क्रमदीश्वर, सारस्वत-व्याकरणकार, वोपदेव, पद्मनाभ और विनयसागर उपाध्याय।

इन आचार्यों ने कातन्त्र, चान्द्र, जैनेन्द्र, हेमव्याकरण, सारस्वत और मुग्धबोध जैसे तंत्रों द्वारा पाणिनि की परंपरा को आगे बढ़ाया।

सारतः कहा जा सकता है कि पं. युधिष्ठिर मीमांसक ने संस्कृत व्याकरण-परंपरा के इतिहास को स्पष्ट करने के लिए महाभाष्य प्रदीप और अष्टाध्यायी के विभिन्न भाष्यकारों तथा वृत्तिकारों का काल निर्धारित किया। उन्होंने चिन्तामणि से लेकर नागेशभट्ट तथा अन्य अज्ञात भाष्यकारों तक का काल-विवेचन ठोस साहित्यिक प्रमाणों के आधार पर प्रस्तुत किया। इसके साथ ही पाणिनी के बाद के कई प्रमुख वैयाकरण—जैसे कातन्त्रकार, चन्द्रगोमी, क्षपणक, वामन, शिवस्वामी, हेमचन्द्र, वोपदेव आदि—का भी क्रमबद्ध ऐतिहासिक काल-निर्धारण किया।

इतिहासकारों द्वारा उपेक्षित इन व्याकरणाचार्यों की कालानुक्रमिक प्रस्तुति मीमांसक जी ने पहली बार व्यवस्थित रूप में दी, जिससे संस्कृत व्याकरण-शास्त्र के इतिहास की कड़ी सुगठित, प्रमाणिक और स्पष्ट बन सकी। यह कार्य भारतीय व्याकरण-इतिहास में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान सिद्ध होता है।

❖❖❖